The Knowledge Spectrum: An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal
ISSN: 3107-3557 (Online)

44

भारतीय दर्शन और जीवनमूल्य

Dr. Nayanaben C. Patel
Associate Professor
Smt.B.V.Dhanak Arts Commerce Science and Management College Bagasara, Gujarat

शोधपत्र सारांश :

भारतभूमि अपनी ज्ञान राशि के लिए विश्वविख्यात है। ज्ञान के भंडार दर्शन ग्रंथों का आविर्भाव वैश्विक परिप्रेक्ष्य में बहुत ही महत्त्व रखता है। भारतीय दर्शन जीवन, धर्म तथा ज्ञान के चरम लक्ष्य को साक्षात् चक्षु से ही दिखाने का एकमात्र साधन है। जिस तरह से भारतीय दर्शन का महत्त्व प्रस्थापित है, ठीक उसी प्रकार से मानव-जीवन के लिए मूल्यों का भी उतना ही महत्त्व है। मानवमूल्यों पर आधारित मीमांसा को मूल्यमीमांसा से अभिहित किया जाता है। मानव-मूल्य वे शक्ति-पुंज हैं जो मनुष्य की आत्मा को सशक्त बनाते हैं जिनसे मनुष्य 'बिनु पग चले सुनै बिनु काना' को आत्मशक्ति से ओतप्रोत हो अकिंचन होते हुए भी परम संतुष्ट अनुभव करता है। भारतीय दर्शन साहित्य में मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा विद्यमान है। वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, आस्तिक दर्शन के अंतर्गत सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत, नास्तिक दर्शन के अंतर्गत जैन, बौद्ध आदि में मानव-मूल्य की ओर संकेत किया गया है। जीवन-मूल्य मानवीय आचरण तथा व्यवहारों का एक मापदण्ड या मानक है। ये मानवीय अनुभवों के साथ ही विविध सांस्कृतिक, सामाजिक परम्पराओं पर भी अवलंबित होते हैं। उद्देश्य की दृष्टि से 'मूल्य', 'मानव-मूल्य' और 'जीवन-मूल्य' एक-दूसरे के पूरक कहे जा सकते हैं। वास्तव में मनुष्य की मूल्य चेतनाएँ ही मानव-मूल्यों, जीवनमूल्यों का सृजन करती हैं। भारतीय दर्शन साहित्य में मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा विद्यमान है। वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, आस्तिक दर्शन के अंतर्गत सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत, नास्तिक दर्शन के अंतर्गत जैन, बौद्ध आदि में मानव-मूल्य की ओर संकेत किया गया है। जीवन-मूल्य मानवीय आचरण तथा व्यवहारों का एक मापदण्ड या मानक है। सभी भारतीय दर्शनों का मूलभूत हेतु मानवोत्कर्ष रहा है। भारतीय दर्शन ने न केवल भारतियों का, बल्कि विदेशियों का भी मन मोह लिया है। इन दर्शनों में आत्मोत्कर्ष के लिए जो भी सिद्धांत के रूप में बात कही गयी है, वह वस्तुतः मानव-मूल्य ही है। सभी भारतीय दर्शनों का मूलभूत हेतु मानवोत्कर्ष रहा है। स्थूल रूप में यह सब धर्मों के प्रचलन के लिए बनाये गए हो, ऐसा प्रतीत होता है, लेकिन उसकी तह तक जाकर पता लगायें तो सूक्ष्म रूप से ये सब मानवधर्म निभाने के लिए मानवों के लिए अति उपयोगी मानव-मूल्य ही हैं। इन मूल्यों के परिपालन से मानव-जीवन दैदीप्यमान हो सकता है।

बीज शब्द :

भारतवर्ष, दर्शनशास्त्र, मूल्यमीमांसा, अंतर्निरीक्षण, आन्वीक्षिकी-दर्शन, निःश्रेयस, अभ्युदय, त्रिशिक्षा, वेदाधारिता, षड्दर्शन, प्रमाणमीमांसा, अपरिमित, अनुप्राणित, प्राणायाम, त्रिरत्न, मूल्य-सापेक्ष

प्रस्तावना :

भारतभूमि अपनी ज्ञान राशि के लिए विश्वविख्यात है। ज्ञान के भंडार दर्शन ग्रंथों का आविर्भाव वैश्विक परिप्रेक्ष्य में बहुत ही महत्त्व रखता है। वस्तुतः दर्शनशास्त्र बहुत ही कठिन विषय है, परन्तु इसी में भारतवर्ष की मानसिक निधि

सुरक्षित है। अनादिकाल से ज्ञानपिपासुओं ने इस भंडार से समय-समय पर बहुमूल्य रत्नों को निकालकर भारत को गौरव प्रदान किया है। आज भी समस्त संसार में इसी बहुमूल्य दर्शनशास्त्र की विचारधारा के लिए भारतवर्ष का मस्तक गर्व से ऊँचा है। मानवीय ज्ञान को समृद्ध करने में प्राचीन भारतीय दार्शनिकों का योगदान निश्चय ही अतुलनीय है। किन्तु इनके ज्ञान का लक्ष्य मानव के भौतिक जीवन की समृद्धि नहीं था। दरअसल भौतिक समृद्धि के परे भी कोई समृद्धि होती है, जिसके बगैर भौतिक समृद्धि व्यर्थ हो जाती है; इसे हमारे विचारकों ने दर्शन-ग्रंथों के माध्यम से सदियों पूर्व भलीभाँति समझ लिया था। मूलतः भारतीय दर्शन जीवन, धर्म तथा ज्ञान के चरम लक्ष्य को साक्षात् चक्षु से ही दिखाने का एकमात्र साधन है। जिस तरह से भारतीय दर्शन का महत्त्व प्रस्थापित है, ठीक उसी प्रकार से मानव-जीवन के लिए मूल्यों का भी उतना ही महत्त्व है। मानवमूल्यों पर आधारित मीमांसा को मूल्यमीमांसा से अभिहित किया जाता है। मानव-मूल्य वे शक्ति-पुंज हैं जो मनुष्य की आत्मा को सशक्त बनाते हैं जिनसे मनुष्य 'बिनु पग चले सुनै बिनु काना' को आत्मशक्ति से ओतप्रोत हो अकिंचन होते हुए भी परम संतुष्ट अनुभव करता है।[1] इस शोध-प्रपत्र में भारतीय दर्शन और जीवनमूल्यों पर बहुत ही संक्षेप में दृष्टिपात किया गया है।

'दर्शन' अर्थ व परिभाषा :

दर्शन शब्द 'दृश' (देखना) धातु से बना है। व्युत्पत्ति के अनुसार दर्शन का अर्थ है-'दृश्यते अनेन इति दर्शनम्' अर्थात् जिसके द्वारा देखा जाय वह दर्शन है। प्रश्न उठता है कि यहाँ किसे और किसके द्वारा देखने की बात की जा रही है? सामान्यतया हम आँख द्वारा बाह्य जगत् के पदार्थों को देखते हैं तथा इसे ही दर्शन कहते हैं। व्यापक अर्थ में उसका उद्देश्य आँख द्वारा सामान्य वस्तुओं को देखना नहीं, वरन् सूक्ष्म दृष्टि द्वारा सामान्य वस्तुओं और घटनाओं के भी पीछे छिपे सत्य को देखना है। इसे ही दार्शनिक चिंतन कहते हैं।[2] डॉ.राधाकृष्णन् का स्पष्ट मानना है कि "यह दर्शन या तो इन्द्रियजन्य निरीक्षण हो सकता है, या प्रत्ययी ज्ञान अथवा अंतर्दृष्टि द्वारा अनुभूत हो सकता है। यह घटनाओं के सूक्ष्म निरीक्षण, तार्किक परीक्षण अथवा आत्मा के अंतर्निरीक्षण द्वारा भी प्राप्त हो सकता है। साधारणतः दर्शनों से तात्पर्य आलोचनात्मक व्याख्याओं (भाष्य), तार्किक सर्वेक्षणों अथवा दार्शनिक पद्धतियों से होता है। दार्शनिक विचार की प्रारंभिक अवस्थाओं में दर्शन शब्द का प्रयोग इन अर्थों में हमें नहीं मिलता, क्योंकि उस समय दार्शनिक ज्ञान अधिकतर आभ्यंतर दृष्टिपरक था। यह दर्शाता है कि 'दर्शन' अंतर्दृष्टि नहीं है, भले ही यह उससे कितना ही सम्बद्ध क्यों न हो। संभवतः इस शब्द का प्रयोग बहुत सोच-विचार के बाद उस विचार-पद्धति के लिए किया गया है जिसकी प्राप्ति तो अंतर्दृष्टिजन्य अनुभव से होती है पर जिसकी पुष्टि तार्किक प्रमाणों द्वारा।[3] यहाँ अंतर्दृष्टि तथा तार्किक प्रमाण दोनों ही महत्वपूर्ण है। दर्शन की कुछ परिभाषाएँ देखिए-

1. 'भारतीय जीवन तथा भारतीय दर्शन में सर्वथा ऐक्य है-एक व्यावहारिक है, दूसरा सैद्धांतिक है।"

- डॉ. उमेश मिश्र[4]

2. "दर्शनशास्त्र (आन्वीक्षिकी-दर्शन) अन्य सब विषयों के लिए प्रदीप का कार्य करता है, यह समस्त कार्यों का साधन और समस्त कर्तव्यकर्मों का मार्गदर्शक है।"

- कौटिल्य

3. "दर्शन एक ऐसा आध्यात्मिक ज्ञान है, जो आत्मा-रूपी इन्द्रिय के समक्ष सम्पूर्ण रूप में प्रकट होता है।"

- डॉ. राधाकृष्णन्[5]

4. "जीवन का वैज्ञानिक अध्ययन करना ही दर्शनशास्त्र का काम है।"

डॉ. देवराज एवं डॉ. रामानंद तिवारी

5. "दर्शनशास्त्र का जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। 'जीवन' और 'दर्शन' एक ही उद्देश्य के दो परिणाम हैं। दोनों का चरम लक्ष्य एक ही है। परम श्रेय (निःश्रेयस) की खोज करना। उसी का सैद्धांतिक रूप दर्शन है और व्यावहारिक रूप जीवन।"

डॉ. वाचस्पति गैरोला[6]

जीवन और दर्शन :

भारतीयों का प्रत्येक कार्य अलौकिक तथा आध्यात्मिक भावों से परिपूर्ण है। मनुष्य के जीवन के नियमानुकूल कार्य तथा दर्शनशास्त्रों में सिद्धांत-रूप में कहे गए आधिभौतिक, आधिदैविक तथा आध्यात्मिक तत्त्व परस्पर इस प्रकार ओतप्रोत हैं कि एक दूसरे से कभी भी पृथक् नहीं हो सकते। इन दोनों में अविनाभाव सम्बन्ध है। जीवन का सादापन, उच्च विचार में प्रेम, अंतःकरण की प्रशांत भावना, सत्यप्रियता, संसार को पारमार्थिक दृष्टि से मिथ्या समझना, दैवी शक्ति में श्रद्धा, भक्ति और आत्मसमर्पण, जीवन की उलझनों को सुधारने में तत्परता, परमसुख तथा आनंद की प्राप्ति के लिए पूर्ण उत्सुकता और अदम्य उत्साह आदि गुण साधारण रूप से प्रत्येक भारतीय के विभिन्न कार्यों में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से पाये जाते हैं। जीवन की झंझटों से बच कर सत्य और असत्य, श्रेयस् और प्रेयस्, निःश्रेयस् और अभ्युदय, प्रिय और अप्रिय, चेतन और जड़, सुख और दुःख आदि तत्त्वों के रहस्यों को समझने के लिए सृष्टि के आरंभ से ही भारतीय अपने जीवन की समस्त शक्तियों को लगाते चले आ रहे हैं। इसके लिए वेद से लेकर आज तक के सभी साहित्य साक्षी है। इसलिए भारतवर्ष की पुण्यभूमि में अनादिकाल से ही आध्यात्मिक चिंतन की, दर्शन की, विचारधारा बहती चली आ रही है, यह कहना अनुपयुक्त न होगा।[7] जीवन की सर्वांगीणता के निर्माणक सूत्र, तंतु या तत्त्व है उन्हीं की व्याख्या करना दर्शन का अभिप्रेय है। दार्शनिक दृष्टि से जीवन पर विचार करने की निजी पद्धति है, अपने विशेष नियम हैं। इन नियमों और पद्धतियों के माध्यम से जीवन का वैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत करना ही दर्शन का ध्येय है।... जिज्ञाशा का अर्थ है ज्ञान की इच्छा (ज्ञातुं इच्छा)। यही ज्ञानेच्छा हमें जीवन के प्रति, जगत् के प्रति नये-नये अन्वेषणों, अनुसंधानों और आविष्कारों में प्रवृत्त करती है। इन नयी क्रियाओं एवं प्रवृत्तियों से हमें नया ज्ञान मिलता है; नया दर्शन उपलब्ध होता है। क्योंकि जीवन की मीमांसा करना ही दर्शन का एकमात्र उद्देश्य है, अतः जीवन से सम्बंधित जितने भी आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक पदार्थ हैं; उनका तात्त्विक विश्लेषण करना भी दर्शन का कार्य हो जाता है।[8] मूलतः भारत दर्शन की आदर्श भूमि रहा है। दर्शन की वेदाधारिता भी स्मरणीय है।

भारतीय दर्शन और उसकी विशेषताएँ :

वेदों का भारतीय दर्शन में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि वेद स्वयं कोई विशुद्ध दार्शनिक रचना नहीं है, किन्तु निश्चय ही वेदों में यत्र-तत्र जो दार्शनिक विचार बिखरे पड़े हैं; वे अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। भारतीय दर्शन में उपनिषदों का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रायः सभी भारतीय दर्शन, चाहे वे आस्तिक हो या नास्तिक उपनिषदों से किसी न किसी रूप में प्रभावित हैं। विशेषतः आस्तिक षड्दर्शन तो इनसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हैं। वे स्पष्टतः इनकी प्रमाणिकता स्वीकार करते हैं। 'वेदांत दर्शन' तो विशेष रूप से उपनिषदों से जुड़ा हुआ है। उपनिषदों से न केवल भारतीय दर्शन वरन् हिन्दू धर्म भी अत्यंत प्रभावित हुआ है। भगवद्गीता, जो हिन्दुओं का महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है, इतनी उपनिषदों से प्रभावित है कि प्रायः इसे उपनिषदों का निचोड़ कह दिया जाता है।

भारतीय दर्शन को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, आस्तिक दर्शन और नास्तिक दर्शन। वास्तव में आस्तिक दर्शन वे हैं जो वेद समर्थक है, जबकि नास्तिक दर्शन वे हैं जो वेद विरोधी है। आस्तिक दर्शन के अंतर्गत सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत आदि का समावेश होता है। जबकि नास्तिक दर्शन के अंतर्गत जैन, बौद्ध, चार्वाक का समावेश होता है। सैद्धांतिक दृष्टि से नास्तिक दर्शन को अनीश्वरवादी या प्रत्यक्षवादी कहा जाता है। भारतीय दर्शनों की विशेषताएँ निम्नांकित हैं-

1. वैचारिक स्वतंत्रता- भारतीय दर्शन में बिना किसी दबाव के चिंतन हुआ है। यहाँ परस्पर विरोधी विचार भी साथ-साथ प्रस्तुत हुए हैं। विरोधी विचारों को भारतीय दार्शनिकों ने कभी हिन-तुच्छ नहीं समझा। विरोधियों द्वारा लगाये गए

या लगाये जाने वाले आरोपों को ध्यान में रखते हुए उनका खंडन करते हुए वे आगे बढ़ते थे। यह वैचारिक स्वतंत्रता के कारण ही संभव हो पाया।

2. प्रमाणशास्त्र और तर्कशास्त्र का महत्त्व- प्रत्येक भारतीय दर्शन की अपनी ज्ञानमीमांसा रही है और सबने सत्य की खोज में प्रमाणों पर गंभीरता से विचार किया है। इससे भारतीय तर्कशास्त्र भी अत्यंत समृद्ध हुआ है। न्याय दर्शन तो मुख्यतः तर्कशास्त्र ही है। पर यह भी सत्य है कि भारतीय दर्शन में तर्कशास्त्र एवं प्रमाणमीमांसा का उद्देश्य उस ज्ञान की प्राप्ति रहा है, जो मोक्ष की प्राप्ति कराए।

3. नैतिकता का महत्त्व- डॉ.राधाकृष्णन् मानते हैं कि-'दैवीय ज्ञान की प्राप्ति के लिए आचार-शुद्धि पहला कदम है।' भारतीय दर्शन में ज्ञान का मतलब 'कोरा ज्ञान' अथवा 'शाब्दिक ज्ञान' नहीं है। प्रत्येक दर्शन मुक्ति की प्राप्ति हेतु व्यावहारिक मार्ग भी बतलाता है। यह पूर्णतः नैतिक मार्ग है। भारतीय दार्शनिक मोक्ष हेतु चित्त की शुद्धि आवश्यक बताते हैं जो एक ऐसे योगी को ही उपलब्ध हो सकती है जो जितेन्द्रिय हो। जैन व बौद्ध का 'सम्यक् कर्म' और प्रकारांतर से गीता का 'निष्काम कर्म' मनुष्य को मुक्ति दिलाता है। यह तभी संभव हो सकता है जब वह अनीति से बचे और नैतिकता का आचरण करें।

4. आनंद का महत्त्व- उपनिषदों में ब्रह्म को आनंद स्वरूप कहा गया है, जिसे जान लेने पर विद्वान् किसी से भायातंकित नहीं होता-'आनन्दो ब्रह्मणो विद्वान् न विभेति कदाचन्।' भारतीय दर्शन 'मुक्ति' में न केवल सभी प्रकार के दुःख, भय, संदेह आदि से मुक्ति की बात करता है, वरन् उस आनंद की प्राप्ति की भी आशा दिलाता है। जो असीम, अपरिमित और नित्य है, जिसके सामने न केवल सांसारिक दुःख परन्तु सांसारिक सुख भी तुच्छ हो जाते हैं।

5. मोक्ष का महत्त्व- भारतीय दर्शन न केवल इस जन्म में आने वाली मृत्यु से, वरन् अगले जन्मों में होने वाली मृत्युओं से और इस तरह सम्पूर्ण जन्म-मरण के चक्र से ही मुक्ति का आश्वासन देता है। वस्तुतः मोक्ष-विषयक चिंतन ही समस्त भारतीय दर्शन की धुरी है। चार्वाक दर्शन को छोड़कर बाकी के तमाम दर्शनों का लक्ष्य मुक्ति (मोक्ष) की प्राप्ति है। मृत्यु की हकीकत को स्वीकारते हुए भारतीय दार्शनिक अमरत्व के लिए भी चिन्तनशील है। उसका जीव, जगत् और ईश्वर के प्रति चिंतन सत्य का साक्षात्कार करने के लिए है।

6. धर्म और दर्शन में समन्वय- भारतीय दर्शन के आधार पर धर्म और दर्शन में समन्वय इसलिए प्रतीत होता है, क्योंकि दोनों का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है। प्रायः सभी धर्म दार्शनिक विचार रखते हैं। हिन्दू धर्म वेद, उपनिषद् और वेदांत दर्शन से अनुप्राणित है। बौद्ध और जैन धर्म क्रमशः बौद्ध और जैन दर्शन की आधारशिला पर खड़े हुए हैं।

7. आत्मा के अस्तित्व में विश्वास- भारतीय दर्शन मनुष्य को उसके वास्तविक स्वरूप से परिचित कराता है। मूलतः भारतीय दर्शन आत्मा के अस्तित्व में विश्वास रखते हैं जो शरीर से पृथक् है, अजर-अमर है और जो मनुष्य का वास्तविक 'मैं' है। भारतीय दर्शन सिखाता है कि आत्मा को पहचानने वाला मोक्ष का अधिकारी बनता है, जबकि शरीर और मन को 'मैं' समझने वाला अनेक प्रकार के दुःख उठाता है। भारतीय दर्शन यह भी बताता है कि मनुष्य मरण-धर्मा नहीं है, वह तो परमात्मा का अंश 'अमृतस्य पुत्र' है।

8. कर्म फल में विश्वास- श्रीमद् भगवद्गीता कर्मवादी बनाने वाला दर्शन है। गीता कहती है- "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।" 'जो जैसा बोता है, वैसा पाता है, 'जैसी करनी वैसी भरनी हमारा वर्तमान भूतकाल पर और भविष्य वर्तमान पर आधारित है। कुछ भौतिकवादी दार्शनिकों को छोड़कर शेष सभी दार्शनिक कर्मफल पर गहरी आस्था दिखाते हैं। जैन व बौद्ध दर्शनवादी ईश्वर को जगत् के निर्माता के रूप में नहीं स्वीकारते, फिर भी वे कर्मफल के सिद्धांत को मानते हैं। कर्म-फल-सिद्धांत हमें अच्छे कर्म के लिए अवश्य प्रेरित करता है।

9. परलोक व पुनर्जन्म में आस्था- परलोक का अस्तित्व है और पुनर्जन्म भी कर्मों के हिसाब से मिलता है, ऐसा विश्वास भारतीय दर्शन का है। कर्मफल का सिद्धांत न केवल इस जीवन को वरन् मृत्यु के बाद के जीव को भी सँवारने का सन्देश देता है। हमारे कर्म जीव के सुख-दुःख के हेतु बनते हैं। भारतीय दर्शन की परलोक व पुनर्जन्म में आस्था है।

10. भारतीय दर्शन की आशावादी दृष्टि- भारतीय दर्शन निराशावादी है और वह दुःखद पक्ष पर ज्यादा जोर देता है, यह गलत धारणा है। भारतीय दार्शनिक सत्य का साक्षात्कार कर, जन्म-जन्मान्तर के दुःखों से मुक्ति का आश्वासन भी देता है। मूलतः भारतीय दर्शन आशावादी है।

11. दुःख का कारण अविद्या, परन्तु अविद्या का नाश संभव- भारतीय दर्शन समस्त दुःखों का और कर्मफल के रूप में अगले जन्म में मिलने वाले दुःखों का कारण अविद्या को मानता है। वैदिक-अवैदिक दर्शन के मत से अविद्या ही सर्व दुःखों का कारण है। बुद्ध जरा-मरण के कारण के मूल में 'अविद्या' को देखते हैं। अविद्या अनादि होते हुए भी अनंत नहीं है। विद्या अथवा ज्ञान के द्वारा अविद्या का नाश किया जा सकता है। "ज्ञानेन चापवर्गो विपर्ययादिष्यते बन्ध (सांख्यकारिका 44), ऋते ज्ञानात् न मुक्तिः ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं है। " ज्ञानान्मुक्तिः" (सांख्यदर्शन 3.23) ज्ञान से ही मुक्ति मिलती है।

मूल्यमीमांसा का स्वरूप :

आज 'मूल्य-मीमांसा' एक स्वतन्त्र विज्ञान के रूप में विकसित हो रहा है, हालाँकि यह मूलतः तो दर्शनशास्त्र का विषय है। मूल्यों की मीमांसा करते समय मूल्य की अवधारणा को स्पष्ट किया जाता है। इसके अंतर्गत मूल्य के अर्थ, स्वरूप, स्रोत और आधार, अर्जन एवं विकास, प्रासंगिकता, मूल्य-संक्रमण और नवीन मूल्यों की उद्भावना, वर्गीकरण आदि का तात्त्विक विवेचन शामिल हैं। देश-विदेश के चिंतकों-विचारकों ने मानव-जीवन की महत्ता प्रतिपादित की, मानव-जीवन के उत्कर्ष के मूलाधार जीवन-मूल्यों के प्रति सजगता दर्शायी और यह महसूस किया कि मूल्यों के अभाव में मानव जीवन में अव्यवस्था का कुहासा छा जाएगा। इसलिए मानव-जीवन की संयमित व्यवस्था और उसके सुखद-कल्याणकारी परिणामों की उत्कंठा-अभिलाषा ने विचारकों-चिंतकों को अपनी वैचारिकता से मानव के वर्तमान एवं भविष्य का पथ-प्रदर्शन के लिए सक्रीय किया।[9]

मूल्यमीमांसा के लिए अंग्रेजी में (axiology) शब्द मिलता है। ऐतिहासिक दृष्टि से मूल्यमीमांसा के प्रारंभिक सूत्र प्लेटो के प्रत्ययवाद में-विशेषतः 'सर्वोच्च शुभ' के प्रत्यय में और अरस्तू के 'ईश्वर सम्बन्धी विचारों' में मिलते हैं। आधुनिक युग में कांट ने ज्ञानमीमांसा और मूल्यमीमांसा को संयुक्त करने का प्रयत्न किया। उसके अनुसार जान के विषय में समीक्षा हमें नैतिक, धार्मिक तथा कलात्मक मूल्यों का विवेचन करने को बाध्य करती है। हेगेल ने कला, धर्म तथा दर्शन का एक ऐसा त्रिक्र स्वीकार किया जिसमें दर्शन का मूल्य सर्वश्रेष्ठ है। मूल्यमीमांसा के अन्तर्गत चार समस्याएं मुख्य रूप से विचारणीय है-1. मूल्यों का स्वरूप 2. उनके प्रकार 3. उनकी समीक्षा के मानक 4. उनकी सत्तात्मक स्थिति।[10] एक आदर्श समाज में नैतिक, सामाजिक व आध्यात्मिक मूल्य प्रचलित होते हैं। मूल्य धर्म एवं दर्शन के उद्देश्य प्रतिबिंबित करते हैं, जिनका लक्ष्य है-लोगों को बेहतर जीवन जीने के लिए मार्गदर्शन देना। वास्तविकता यह है कि मानवीय मूल्यों की कोई निश्चित संख्या निर्धारित नहीं की जा सकती। युगीन आवश्यकताओं के अनुरूप वैश्विक शांति एवं वातावरण के संरक्षण के लिए नये-नये मूल्यों की उत्कट आवश्यकता है। वस्तुतः महत्त्वपूर्ण प्रश्न मूल्यों की संख्या अथवा वर्गीकरण का, उनकी परिसीमा का नहीं, उनकी पुनःप्रतिष्ठा का है। धर्म का व्यावहारिक रूप नीति है तो नीति का सैद्धांतिक रूप धर्म है। मानव मूल्यों का सम्बन्ध नैतिक विचारणा से है और नीति का घनिष्ठ सम्बन्ध धर्म और दर्शन

से है। भारतवर्ष में धर्म एवं दर्शन अभिन्न-रूप से साथ-साथ चलते रहे हैं। ये दोनों ही नैतिक जीवन के आधार-स्तम्भ माने गए हैं।

'मूल्य' का अर्थ व परिभाषाएँ :

'मूल्य' शब्द की व्युत्पत्ति मूल यत्[11] से हुई है जिसका अर्थ है-किसी वस्तु के विनिमय में दिया जाने वाला धन, दाम, कीमत, बाजार-भाव आदि। संस्कृत व्याकरण के आधार पर मूल्य शब्द की निम्नलिखित व्युत्पत्तियाँ मिलती है- (1) मूलेन आनाभ्यं मूल्यम् (2) मूलेन समो मूल्यः। (3) मूलमहर्दीत समो मूल्यम्। मूल्य शब्द की इन व्युत्पत्तिमूलक व्याख्याओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मूल्य का अर्थ है- मूल के समान।'

मूल्य की अनेक विद्वानों ने विभिन्न दृष्टिकोणों से परिभाषाएँ दी है। कोई भी परिभाषा सम्पूर्ण नहीं होती, परन्तु इनसे मूल्य को समझने में सहायता मिलती है-

1. जो जीवन को अस्तित्व और गति प्रदान करें, वही मूल्य है।"

- एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका

2. 'सामाजिक घटनाओं, व्यवहार इत्यादि के सन्दर्भ में यह निर्धारित करने के मानदंड कि उनमें क्या कुछ उचित-अनुचित, उत्कृष्ट-निकृष्ट, वांछनीय-अवांछनीय इत्यादि हैं।"

- समाज विज्ञान कोश

3. 'मूल्यों का सम्बन्ध मनुष्य की चेतना से अनिवार्यतः है। मूल्य का सम्बन्ध मात्र ज्ञान, इच्छा या भावना से नहीं है, अपितु मूल्य समग्र चेतना के विषय हैं।"

- डॉ. संगमलाल पाण्डेय

4. 'मूल्य आचरण के सिद्धांतों को कहते हैं। मूल्य वे मान्यताएँ हैं जिन्हें मार्गदर्शक ज्योति मानकर सभ्यता चलती रही है और जिनकी उपेक्षा करने वालों को परम्परा अनैतिक, उच्छृंखल या बागी कहती है।"

- दिनकर[12]

मूल्य, जीवन-मूल्य और मानव-मूल्य का पारस्परिक सम्बन्ध :

साहित्यिक सन्दर्भ में जीवन-मूल्य कहने मात्र से जिस अवधारणा का संकेत मिलता है, उसमें 'मूल्य' शब्द के साथ 'जीवन' विशेषण के रूप में प्रयोजित है-जीवन का मूल्य। उत्कर्षमय जीवन, जीवन के मूल्यों का मूल आधार है। मूल्य बाहर से आरोपित नहीं हो सकते। ये जीवन के सन्दर्भ में विकसित-पल्लवित-परिवर्तित होते हैं। जीवन के सन्दर्भ में हमारा जैसा दृष्टिकोण होगा, उसी के अनुरूप जीवन-मूल्य हमें हाथ लगते हैं। जब ये मूल्य मानवजीवन के साथ जुड़ते हैं, तब वे मानव-मूल्य कहलाते हैं।

मानव अथवा उसके जीवन के अभाव में 'मूल्य' का अस्तित्व संभव नहीं है। इस तरह से ये शब्द सामान्यतया पर्यायवाची रूप में प्रयुक्त होते देखे जा सकते हैं। उद्देश्य की दृष्टि से 'मूल्य', 'मानव-मूल्य' और 'जीवन-मूल्य' एक-दूसरे के पूरक कहे जा सकते हैं। जहाँ तक 'मूल्य', 'मानव-मूल्य' और 'जीवन-मूल्य' में परिव्याप्त सूक्ष्म भेद का सम्बन्ध है, 'मानव-मूल्य और 'जीवन-मूल्य' के मूल में जगत् एवं जीवन के प्रति प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिकोण बना रहा है। वास्तव में मनुष्य की मूल्य चेतनाएँ ही मानव-मूल्यों, जीवनमूल्यों का सृजन करती हैं। अंतर केवल इतना ही है कि मानव-मूल्य अथवा जीवन-मूल्य चेतना-रूपी मूल्यों से गतिमान होते हैं, प्रत्यक्ष व्यवहारों पर अवलंबित होते हैं।"[13] मनुष्य के आपसी व्यवहार मूल्यों के कारण ही सकारात्मक होते हैं। मनुस्मृति में निर्देश है-धैर्य, क्षमा, संयम, चोरी न करना, शुचिता (आंतर-बाह्य) इन्द्रियों को वश में करना, विवेकमति, ज्ञान, सत्य, क्रोध न करना-ये दस गुण मानव-मूल्य या धर्म स्वरूप

मानना चाहिए।[14] ये और इस तरह के अन्य मानव-मूल्य भारतीय दर्शन में आलेखित हैं, जिसका बहुत ही संक्षेप में विवरण आगे दिया जा रहा है:

दर्शन में मानवमूल्य :

भारतीय दर्शन साहित्य में मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा विद्यमान है। वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, आस्तिक दर्शन के अंतर्गत सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा, वेदांत, नास्तिक दर्शन के अंतर्गत जैन, बौद्ध आदि में मानव-मूल्य की ओर संकेत किया गया है। जीवन-मूल्य मानवीय आचरण तथा व्यवहारों का एक मापदण्ड या मानक है। ये मानवीय अनुभवों के साथ ही विविध सांस्कृतिक, सामाजिक परम्पराओं पर भी अवलंबित होते हैं। जीवन-मूल्यों के विविध स्रोतों पर दृष्टिपात करने पर भारतीय दर्शन एवं सामाजिक मान्यताओं का विशेष स्थान प्रतीत होता है। जब मन अन्न और प्राण के अधिकाधिक अर्जन और संग्रह में लगता है तो जीवन में संघर्ष, विषमता और विकृति का विकास होता है; किन्तु जब मन विज्ञान और आनंद के अर्जन और संग्रह में लगता है तो जीवन में समत्व, शांति और सद्भाव का विकास होता है।[15] मनुष्य के लिए आत्मपूर्णता की प्राप्ति अर्थ लौकिक जीवन को संयमित करने हेतु त्याग, समत्व, शांति जैसे मूल्यों को विकसित करना आवश्यक माना गया है।

भारत की आत्मा वेदों में बसती है। हमारे प्राचीनतम वेद मूल्यनिष्ठ जीवन जीने की सीख देते हैं। वेदों में मानव के सद्गुणों से युक्त जीवन-दर्शन के समग्र रूप से दिग्दर्शन होते हैं। यही कारण है कि वेद आज भी उतने ही सार्थक एवं उपादेय हैं, जितने कि अपने रचना-काल में थे। वेदों में वेद विहित सदाचार के नियम निर्दिष्ट किए गए हैं। ऋग्वेद की मंत्रणा है:

धियं वनेम ऋतया सपन्तः।

- ऋग्वेद 2/11-12

और एक जगह पर कहा गया है 'सर्व तद्भद्र यद्वन्ति देवाः।' अर्थात् जिसको विद्वान् पसंद करे उसे भद्र कहते हैं। विद्वान् उसे पसंद करते हैं जो शिष्टाचार से रहे एवं मधुर व्यवहार करें। जो सदा विद्वानों के साथ रहता है, वह सुखकारी स्वर्ग में निवास करता है, जहाँ ईश्वर स्थान देता है तथा सूर्य किरणें दक्षिणा देती हैं। (ऋग्वेद 1.125.5) इस मन्त्र में विद्वानों के सत्संग का महत्त्व बतलाया गया है। वर्तमान समय में जब मानव निष्ठा एवं ईमानदारी से धन कमाना ही भूल गया है, ऐसे में वेद की यह शिक्षा-'इन्द्र श्रेष्ठानि द्रविणानि धेहि' निष्ठा एवं ईमानदारी को अपनाने की सीख देती है।

उपनिषदों में सदाचार का बार-बार कथन किया गया है। छान्दोग्योपनिषद् में जीवन की एक यज्ञ से तुलना की गयी है, जिसमें तप, दान, साधुता, अहिंसा और सत्यवादिता को ही दक्षिणा कही गयी है। बृहदारण्यकोपनिषद् में भी सद्गुणों को तीन 'द' कारों में संकलित कर दिया गया है: 'दम' अर्थात् आत्मनिग्रह, 'दान' और 'दया'।[16] तैत्तिरीयोपनिषद् माता, पिता, आचार्य और अतिथि की सेवा करना तथा आदर करने की सीख देती है। उसी प्रकार श्रीमद् भगवद्गीता में भी ऐसे ही सद्गुणों का निर्देश किया गया है-

अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः। दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥
अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्। दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं हीरचापलम्॥
तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहो नातिमानिता। भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत॥[17]

प्रायः सभी दर्शनों का लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति रहा है। मोक्ष प्राप्ति हेतु दर्शनों ने जो भी सिद्धांत अथवा नियम बताए हैं, वहाँ मानव मूल्यों का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में निर्देश हो गया है। सांख्य बताता है कि जो मनुष्य ज्ञान और अज्ञान में विवेक दर्शाता है, वही अपवर्ग (मोक्ष) की प्राप्ति कर सकता है। योग दर्शन अविद्या से निवृत्ति हेतु क्रियात्मक प्रयत्न पर

जोर देता है। यह दर्शन चित्त-वृत्ति के निरोध हेतु अभ्यास व वैराग्य पर विशेष बल देता है-'अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।' (योगसूत्र-1/12)। महर्षि पतंजलि कहते हैं-"योग के अंगों का अनुष्ठान करने से अशुद्धि का नाश होता है, जिससे जान का प्रकाश चमकता है, जिससे कि विवेक ख्याति की प्राप्ति होती है।"[18] योग के अष्टांग-यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधी मानव के लिए अति महत्त्व के हैं। न्याय दर्शन में तत्वज्ञान के साथ ही योग (यम, नियम आदि) भी आवश्यक बताया गया है। महर्षि गौतम कहते हैं कि "योग से आत्मा संस्कारित होती है। इसके अतिरिक्त स्वाध्याय और विद्वानों से संवाद भी इसमें सहायक हैं। निंदारहित और परम ज्ञानी गुरु से शिष्यत्व ग्रहण करना भी आत्मज्ञानी के लिए आवश्यक हैं।"[19] वैशेषिक दर्शन अभ्युदय अर्थात् सांसारिक उन्नति पर बल देता है। साथ ही साथ वह निःश्रेयस (आत्मिक कल्याण) को भी महत्त्वपूर्ण मानता है। सांसारिक उन्नति धर्म से अर्थात् शास्त्रों द्वारा बताये कर्मों का पालन करने से होती है। मीमांसा दर्शन का प्रधान विषय धर्म है। धर्म की प्राप्ति का प्रमुख साधन कर्म बताया गया है। वेदविहित कर्म ही मीमांसा के अनुसार धर्म है, करणीय है, मोक्ष प्रदान करने वाले हैं।

वेदांत दर्शन आत्मा का ब्रह्म रूप में साक्षात्कार करने के पूर्व ज्ञानी को विवेक, विराग, षट् संपत्ति (शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा, समाधान), मुमुक्षुत्व जैसे चार साधनों से संपन्न होना आवश्यक बताता है। जैन दर्शन में मोक्ष प्राप्ति हेतु त्रिरत्न (सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चरित्र) एवं पंचमहाव्रत (अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह) का सिद्धांत प्रस्तुत किया गया है। यह दर्शन दस धर्मों के पालन पर भी विशेष बल देता है। क्षमा, मार्दव (कोमलता), आर्जव (सरलता), सत्य, शौच (शरीर और आत्मा की शुद्धि), संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य (किसी पदार्थ में ममता न रखना), ब्रह्मचर्य आदि धर्म के साथ मूल्य के रूप में भी स्वीकृत हैं। बौद्ध दर्शन अष्टांग पथ का निर्देश देता है-सम्यक् दृष्टि, सम्यक् संकल्प, सम्यक् वाक्, सम्यक् कर्मान्त (सही कर्म), सम्यक् आजीव (शुद्ध जीविकोपार्जन), सम्यक् व्यायाम, सम्यक् स्मृति, सम्यक् समाधि। बौद्ध दर्शन त्रिशिक्षा के अंतर्गत शील, समाधि और प्रज्ञा का महत्त्व भी समझाता है।

इन सभी दर्शनों को देखें तो हमें लगता है कि सभी भारतीय दर्शनों का मूलभूत हेतु मानवोत्कर्ष रहा है। स्थूल रूप में यह सब धर्मों के प्रचलन के लिए बनाये गए हो, ऐसा प्रतीत होता है, लेकिन उसकी तह तक जाकर पता लगायें तो सूक्ष्म रूप से ये सब मानवधर्म निभाने के लिए मानवों के लिए अति उपयोगी मानव-मूल्य ही हैं। इन मूल्यों के परिपालन से मानव-जीवन दैदीप्यमान हो सकता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मानव-जीवन बहुत कीमती है। उसकी न केवल शारीरिक जरूरतें होती है, बल्कि उससे भी विशेष आत्मिक जरूरतें होती हैं। यह तथ्य हमारे दार्शनिक भलीभाँति समझ गए थे, अतः उनका दार्शनिक चिंतन आत्मिक बल-आत्मोत्कर्ष पर विशेष रहा था। मानव जीवन के लिए ऐसे कौन से उपाय हो सकते हैं, जिनकी बदौलत मानव-जीवन देव तुल्य बन सके, इसकी चिंता हमारा भारतीय दर्शन हमेशा करता रहा है। सच तो यह है कि भारतीय दर्शन ने न केवल भारतियों का, बल्कि विदेशियों का भी मन मोह लिया है। इन दर्शनों में आत्मोत्कर्ष के लिए जो भी सिद्धांत के रूप में बात कही गयी है, वह वस्तुतः मानव-मूल्य ही है। मनुष्य का मूल्य-सापेक्ष जीवन उसे अनेक प्रगति के सोपान पार करवा कर बहुत आगे ले जा सकता है। यह उम्मीद अनुचित नहीं है कि आने वाले समय में भी हमारा भारतीय दर्शन समूचे विश्व का पथ-निदर्शन करते हुए मूल्यनिष्ठ जीवन जीने की सीख देता रहेगा।

सन्दर्भ सूची :

1. शर्मा, सुकेश, भारतीय संस्कृति में मानव मूल्य और लोक कल्याण, संजय प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् 2008 ई., पृ. VI

2. निगम, डॉ. शोभा, भारतीय दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, चतुर्थ संस्करण सन् 2011 ई., पृ. 1
3. डॉ. राधाकृष्णन् , भारतीय दर्शन-1, राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, संस्करण सन् 2012 ई., पृ. 35
4. मिश्र, डॉ. उमेश, भारतीय दर्शन, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ, पंचम संस्करण सन् 2003 ई., पृ. 9
5. डॉ. राधाकृष्णन् , भारतीय दर्शन-1, राजपाल एण्ड सन्ज़ दिल्ली, संस्करण सन् 2012 ई., पृ. 36
6. गैरोला, डॉ. वाचस्पति, भारतीय दर्शन, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पंचम संस्करण सन् 2009 ई., पृ. 14
7. मिश्र, डॉ. उमेश, भारतीय दर्शन, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान लखनऊ, पंचम संस्करण सन् 2003 ई., पृ. 3-4
8. गैरोला, डॉ.वाचस्पति, भारतीय दर्शन, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, पंचम संस्करण सन् 2009 ई., पृ. 14
9. सेठी, डॉ. हरीश, जीवन मूल्य विमर्श, संजय प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् 2008 ई., पूर्वकथ्य से
10. डॉ. नगेन्द्र / डॉ. नरवणे, मानविकी पारिभाषिक कोश (दर्शन खण्ड), राजकमल प्रकाशन दिल्ली सन् 2001 ई., पृ.30-31
11. आप्टे, वामन शिवराम, संस्कृत-हिन्दी कोश, रचना प्रकाशन जयपुर, सन् 2008 ई., पृ. 812
12. सेठी, डॉ. हरीश, जीवन मूल्य विमर्श, संजय प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् 2008 ई.,पृ. 15
13. वही, पृ. 7
14. मनुस्मृति, 6.92
15. रघुनाथगिरि, आचारशास्त्र भारतीय एवं पाश्चात्य, न्यू भारतीय बुक कोर्पोरेशन दिल्ली, प्रथम संस्करण सन् 2009 ई., पृ.17
16. बृहदारण्यकोपनिषद, 5.2.3
17. श्रीमद् भगवद्गीता, 16/1-2-3
18. योगसूत्र, 2/28
19. न्याय-सूत्र, 4/2/46-47